विकल्प संगम

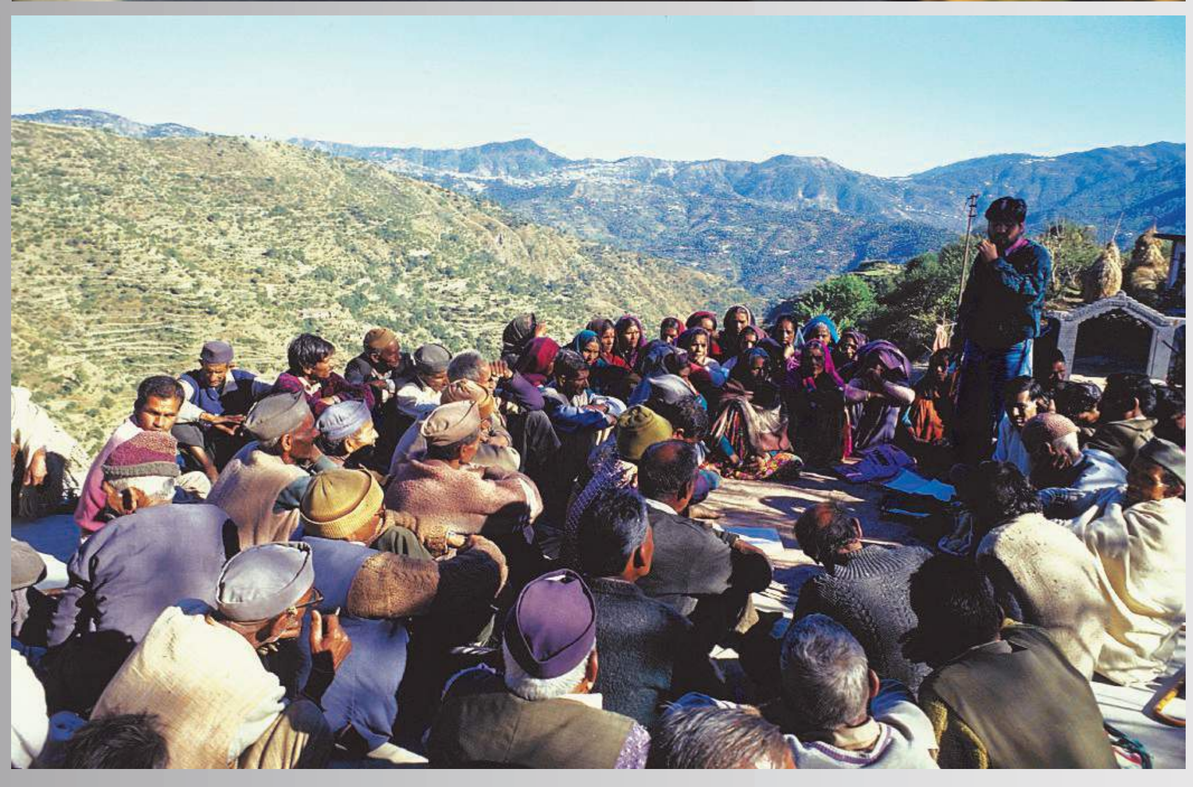

KALPAVRIKSH
कल्पवृक्ष

विकल्पों की खोज में...

Published by

Kalpavriksh, 5, Shree Dutta Krupa, 908 Deccan Gymkhana, Pune 411004

www.kalpavriksh.org

Funded by

Oxfam India

Heinrich Boll Foundation

Story & Photograph Contributions

Ashish Kothari, Adam Cajka, Ananya Mehta, Inanc Tekguc, Pankaj Sekhsaria, Prayaag Joshi, Rashi Mishra, Shiba Desor, Sourabh Phadke, Sujatha Padmanabhan, Vinay Nair, Vivek Broome, DDS Community Media Trust

Translation

Yogendra Dutt, Arvind Gupta

Design and Layout

Vinay Nair, Tanya Majmudar

ISBN: 978-81-87945-68-0

Date of first publication: January 2016 (This book is based on exhibition posters first printed in 2015.)

This book is based on a mobile poster exhibition on alternatives, and published as part of the Kalpavriksh programme on Alternative Practices and Visions in India. For more details, go to www.vikalpsangam.org. Relevant stories for the website and the next booklet can be sent to anurivelihoods@gmail.com.

This work is licensed under Creative Commons license Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International (CC BY-NC-SA 4.0).

http://creativecommons.org/licenses/by-nc-sa/4.0

You are free to copy, redistribute and adapt the materials for non-commercial purposes with attribution to original authors and photographers, clearly indicating changed portions and under an identical license.

प्रस्तावना

'विकास' और 'वैश्वीकरण' के मौजूदा ढांचे से गंभीर नकारात्मक परिणाम पैदा हो रहे हैं : पारिस्थितिकीय ध्वंस, समुदायों की तबाही, बड़े पैमाने पर आजीविकाओं का तहस-नहस होना और सामाजिक-आर्थिक असमानताओं में इजाफा आदि। इन बदलावों का काफी अध्ययन हो चुका है, उनके बारे में काफी कुछ लिखा और कहा जा चुका है।

मगर इसके साथ ही पारिस्थितिकीय रूप से टिकाऊ और सामाजिक-आर्थिक रूप से समतापरक इंसानी खुशहाली के व्यावहारिक रास्ते ढूंढने के लिए विकल्पों की तलाश और आजमाइश की भी असंख्य कोशिशें की जा रही हैं। आमतौर पर ये छोटी-छोटी, बिखरी हुई, एक-दूसरे से अलग-थलग कोशिशें हैं और लिहाजा उनके बारे में इतना अध्ययन नहीं हुआ है कि उनका व्यापक प्रचार हो सके। इन कोशिशों को एक वैकल्पिक समाज की समग्र रूपरेखा या दृष्टियों में नहीं पिरोया गया है और फिलहाल वे प्रभुत्वशाली ढर्रे को चुनौती देने और बदलने के लिए एक 'निर्णायक बल' हासिल करने के मुकाम तक नहीं पहुंची हैं।

यह इन्हीं विकल्पों की एक प्रदर्शनी है जो हमारी जमीनों, नदियों, जंगलों, पहाड़ों, खेती और उनको सींचने-संवारने वाले लोगों की विपुल विविधता और समृद्धि को दर्शाने की उम्मीद से आयोजित की गई है। यह ऐसे प्रयासों और विचारों की पूरी शृंखला नहीं है बल्कि उसके केवल कुछ उदाहरण हैं। जैसे-जैसे यह प्रदर्शनी आगे फैलेगी, नए स्थानों तक पहुंचेगी, इसमें नए प्रयोग और मुद्दे भी आपको देखने को मिलेंगे। इस प्रदर्शनी में फिलहाल कुछ ही लोगों द्वारा ली गई तस्वीरें शामिल की गई हैं मगर हमें पूरी उम्मीद है कि ये ऐसे लोगों को प्रेरित और प्रोत्साहित करने के लिए निश्चय ही काफी हैं जो इस तरह के प्रयोगों में शामिल हैं। हमें यकीन है कि आने वाले वक्त में वे लोग खुद भी अपनी रचनाशीलता का योगदान देने से पीछे नहीं हटेंगे, वे भी नई-नई तस्वीरें, चित्र, ऑडियो या विडियो इस प्रदर्शनी में जोड़ते रहेंगे। इस प्रकार, समय के साथ एक ऐसा चित्ताकर्षक संसाधन अस्तित्व में आ पाएगा जो एक वैकल्पिक भविष्य की कल्पना को सटीक ढंग से व्यक्त कर सके।

आजीविकाएं

ऊपरः रबारियों और उनके ऊंटों का एक रेवड़ प्रवासन के लिए रवाना हो रहा है।

कच्छ में कुछ संगठन चरवाही, संसाधन संरक्षण, वर्षा आधारित खेती और दस्तकारी जैसे एक-दूसरे से बिल्. कुल अलग-अलग दिखाई देने वाले सवालों पर काम कर रहे हैं।

उन्होंने इस बात को समझ लिया है कि कुदरत में हर चीज एक साझा डोर से बंधी हुई है।

सहजीवन इन्हीं में से एक संगठन है जो बन्नी इलाके में गुज्जर और रबारी जैसे चरवाहा समुदायों के बीच काम कर रहा है। यह संगठन इन समुदायों के लिए सामुदायिक एवं आवास अधिकार तथा घास भूमि और जल संसाधनों पर अधिकार दिलाने के लिए पैरवी कर रहा है।

बाएंः *बन्नी इलाके के खुले मैदान में गुज्जरों की एक सामुदायिक बैठक। इस इलाके के बहुत सारे हिस्से या तो दूसरे इलाकों से यहां आयी खरपतवार के कब्जे में जा चुके हैं या खारे हो चुके हैं।*
मध्यः *सहजीवन चरवाही मैदानों और पानी की कुंडियों को बचाने के लिए संसाधन मैपिंग में मदद दे रहा है।*
दाहिनेः *चरवाही जमीनें और बाढ़ग्रस्त मैदान अभी भी बचे हुए हैं जहां मराल (फ्लेमिंगो) और तिलोर जैसे जंगली जीव-जंतु भी निवास करते हैं।*

कच्छ के ही कुछ स्थानों पर सहजीवन की कोशिशों से मवेशियों की कुछ स्थानीय नस्लें कायम रह पायी हैं जिससे समुदायों को दूध बेचने और खेती में उपयोग के लिए गाय के गोबर की रीसाइक्लिंग से आमदनी का एक जरिया मिला है। इसमें सात्विक नामक संगठन भी उनकी मदद कर रहा है जो जैविक खेती का हिमायती है (देखें पन्ना ७)।

बाएंः *कांकरेज - मवेशियों की एक स्थानीय प्रजाति जो खुद को कच्छ के कठिन वातावरण के अनुसार ढाल चुकी है। इन मवेशियों को एक बहुत खास नस्ल के रूप में पहचाना जाने लगा है।*
मध्यः *लखपत इलाके में रबारियों का एक समूह जो एक डेयरी शुरू होने के फलस्वरूप १६ साल बाद घर लौट रहा है।*
दाएंः *डेयरियों के शुरू हो जाने के कारण एक दुर्भाग्यजनक बदलाव यह आया है कि अब लोग ज्यादा भैंस पालने लगे हैं, जिन्हें दूसरे जानवरों से ज्यादा पानी और चारे की जरूरत होती है।*

आजीविकाएं (जारी)

स्थानीय कौशलों का संरक्षण भी इन प्रयासों का एक अहम पहलू रहा है। ये कौशल खास संस्कृतियों और स्थानों से जुड़े हैं और इनमें स्थानीय मिट्टी से उपजे कुदरती रंगों, छपाई के परंपरागत तरीकों और कपड़ों का ही इस्तेमाल किया जाता है।

खमीर इन्हीं विचारों के संगम का एक मंच है। खमीर कच्छ में वर्षा आधारित और जैविक ढंग से उगाई गई कपास की मार्केटिंग करता है जिसे यहां 'काला' कहा जाता है (देखें पन्ना ७)।

कुदरती रंगों से नील का उत्पादन।

भुज में खमीर की दुकान।

नरसिम्हा और मनेम्मा दंपत्ति तेलंगाना में बनने वाले तेलिया रूमाल के लिए धागे तैयार कर रहे हैं।

बाएं: करघे पर चढ़ाए जाने के लिए तैयार रंगा हुआ सूत।
मध्य और दाएं: कुदरती रंगों में रंगे सूत से बनी चिटकी साड़ियां।

इसी तरह का एक प्रयास तेलंगाना में दस्तकार आंध्रा द्वारा किया जा रहा है। इसके तहत दस्तकारों को अपने घरों में और अपनी सुविधा के हिसाब से अपने हाथों और दिमाग का रचनात्मक ढंग से इस्तेमाल करने में मदद दी जाती है।

आजीविकाएं (जारी)

राजस्थान का थार इलाका कई मायनों में कच्छ जैसी शख्सियत रखता है। यहां समुदायों द्वारा सोचे गए, सींचे गए और चलाए जा रहे समुदाय-केंद्रित विकास कार्यक्रमों में साझा विश्वास रखने वाले संगठनों का एक परिवार उरमुल के नाम से सक्रिय है।

बाएं: *मरूस्थली बंकर विकास समिति का एक बुनकर। यह समिति रेगिस्तान के बुनकरों का एक आजीविका संवर्धक समुदाय आधारित संगठन है जो उरमुल नेटवर्क से जुड़ा हुआ है।*

इस तरह के कार्यक्रम केवल नागर समाज तक ही सीमित नहीं हैं। झारक्राफ्ट (नीचे देखें) झारखंड सरकार का एक कार्यक्रम है जो बांस, बेंत, मिट्टी, लाख, जूट, घास और धातुकर्म आदि पर आधारित जनजातीय कौशलों को संरक्षण दे रहा है। केवल पिछले १० साल के भीतर ही इस कार्यक्रम ने तीन लाख से ज्यादा परिवारों को आजीविका प्रदान की है या उसमें इजाफा किया है।

झारक्राफ्ट से जुड़े मिट्टी की चीजें बनाने वाले कारीगर।

'ढोकरा' धातुकर्म - यह झारखंड की ४००० साल पुरानी जनजातीय कला शैली है।

उत्पादन और उपभोग, दोनों के स्थानीयकरण की सोच केवल 'कुटीर उद्योगों' तक ही सीमित नहीं है बल्कि 'औद्योगिक स्तर' के समझे जाने वाले उत्पादों तक भी फैली है। तमिलनाडु के कुथम्बक्कम गांव के भूतपूर्व सरपंच इलेंगो आर. आसपास के गांवों का एक ऐसा क्षेत्रीय समूह बनाना चाहते हैं जो साबुन से लेकर बिजली तक हर चीज के उत्पादन में आत्मनिर्भर हो।

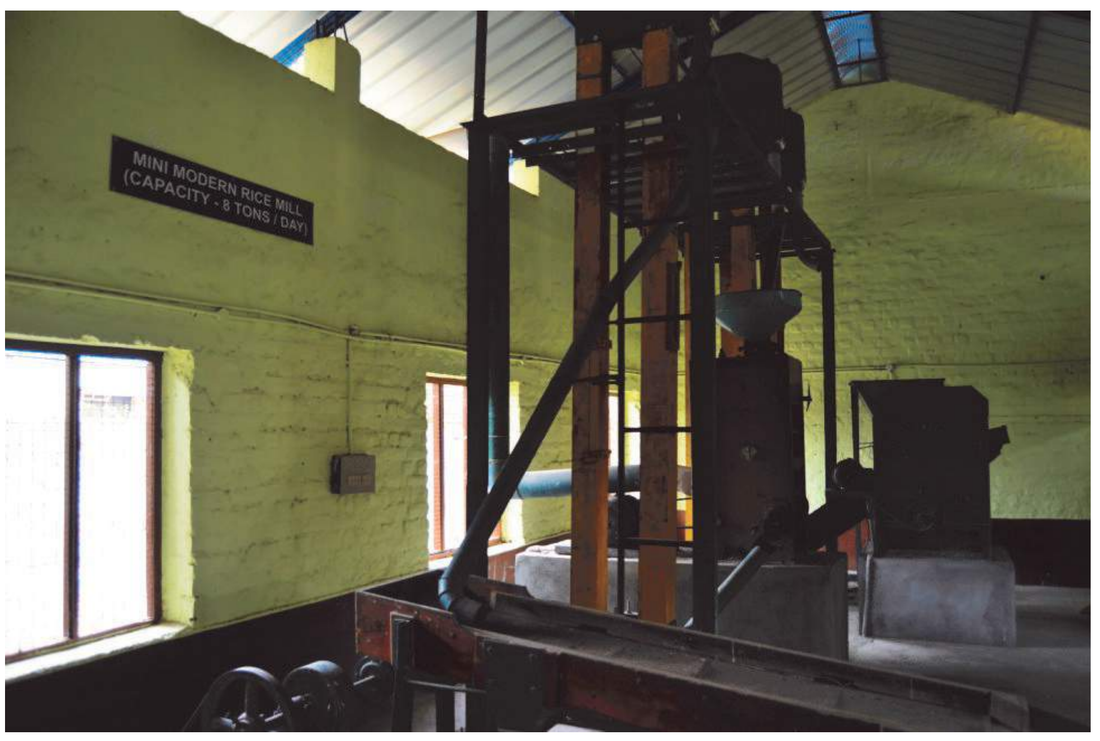

बाएं से दाएं: *कुथम्बक्कम, तमिलनाडु के एक कारखाने में काम करते युवा; अनाज प्रसंस्करण मिल ऐसे कुछ उपकरणों में से है जिन्हें परंपरागत रूप से विशाल उद्योगों के लिए आरक्षित समझा जाता रहा है।*

पर्यावरणीय पर्यटन

पर्यावरणीय पर्यटन (ईकोटूरिज़्म) एक वैश्विक उद्योग है जो विविध प्रकार के नए अवसर तो प्रदान करता है मगर इसमें कुछ खास जोखिम भी छिपे होते हैं। एक तरफ तो यह स्थानीय समुदाय की आमदनी व आजीविका में उल्लेखनीय योगदान दे सकता है, प्राकृतिक संसाधनों के प्रति लोगों में एक बहुमूल्य लगाव पैदा कर सकता है और सच्चे सांस्कृतिक आदान-प्रदान के अवसर पैदा कर सकता है। मगर, दूसरी तरफ यदि इसमें से 'ईको' पहलू को कमजोर कर दिया जाए या उसे केवल सतही तौर पर ही महत्व दिया जाए, जैसा कि अकसर होता है, तो यह संस्कृति या प्रकृति में निहित अपनी असली जड़ों को ही खतरे में डाल सकता है और धीरे-धीरे मुनाफे की आपाधापी की शक्ल ले सकता है।

युक्सम, सिक्किम स्थित एक होम-स्टे।

युक्सम में लगा कचरे का एक कनस्तर। अब युक्सम में कचरा छंटाई केंद्र भी खोल दिया गया है।

सिक्किम के एक उदाहरण से पर्यावरणीय पर्यटन के ऐसे ही कुछ अवांछित खतरों से निपटने में मदद मिलती है। १९९६ में ख़ांगचेंगज़ोंगा नैशनल पार्क के मुहाने पर स्थित युक्सम गांव के युवाओं ने ख़ांगचेंगज़ोंगा कंजर्वेशन कमेटी (केसीसी) का गठन किया ताकि पार्क में बनी ट्रेकिंग की पगडंडियों को और ज्यादा टिकाऊ बनाया जा सके। कमेटी ने 'कचरामुक्त ट्रेकिंग' की सोच को बढ़ावा दिया और सैलानियों के लिए होमस्टे यानी स्थानीय परिवारों के साथ रहने का बंदोबस्त किया। वन विभाग के साथ मिलकर कमेटी ने ट्रेकिंग चालकों द्वारा जलावन के इस्तेमाल पर पाबंदी लगा दी और मिट्टी के तेल से चलने वाले स्टोव मुहैया कराने लगी। अब यहां प्लास्टिक के कचरे की रीसाइक्लिंग की जाने लगी है और उन्हें केसीसी शिक्षा केंद्र में उत्पादों के रूप में बेचा जाता है।

ख़ांगचेंगज़ोंगा नैशनल पार्क में कचरा-मुक्त पगडंडियां।

होडका, गुजरात स्थित शामे-सरहद रिज़ॉर्ट की दीवारों पर परंपरागत कला के नमूने। इस रिज़ॉर्ट में गारे और फूंस का ही इस्तेमाल किया गया है।

कच्छ का होडका गांव बन्नी भू-क्षेत्र के मुहाने पर स्थित है। यहां का शाम-ए-सरहद रिज़ॉर्ट एक ऐसा पर्यटन कैंप है जो मालधारियों के स्थानीय समुदाय द्वारा ही बनाया और चलाया जा रहा है। परंपरागत वास्तुकला का प्रयोग और कला, हस्तकौशल व खान-पान सहित स्थानीय संस्कृति का संरक्षण इस पहलकदमी के पीछे मुख्य मार्गदर्शक सिद्धांत हैं।

भोजन और खेती

ऊपरः *डेक्कन डेवलेपमेंट सोसायटी (डीडीएस) की महिलाओं द्वारा सुरक्षित रखे जा रहे बीजों की विविधता।*

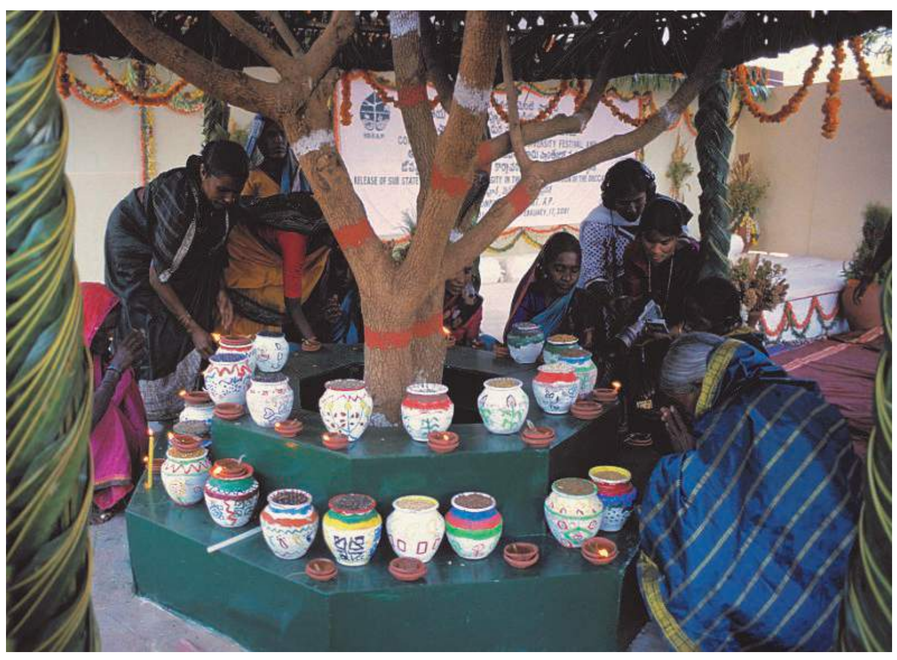

ऊपरः *२००१ में डी.डी.एस. द्वारा आयोजित किया गया एक घुमंतू जैव विविधता उत्सव।*

ऊपरः *कम्युनिटी रेडियो के जरिए अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचना डीडीएस के कार्यक्रमों का हिस्सा रहा है।*

भोजन इंसानी खुशहाली का आधार है। हमारे देश में ऐसे प्रयासों के असंख्य उदाहरण मिल जाएंगे जो न केवल परंपरागत बीज और पशु विविधता के संरक्षण के लिए काम कर रहे हैं बल्कि जैविक सिद्धांतों पर आधारित उत्पादन से लेकर स्थानीय बाजारों तक उपभोग शृंखला की सारी कड़ियों को बचाने की कोशिश कर रहे हैं।

इस क्रम में आंध्र प्रदेश और तेलंगाना राज्यों में सक्रिय डेक्कन डेवलेपमेंट सोसायटी (डीडीएस) सबसे रचनात्मक प्रयासों में से एक है। दिनोदिन वैश्वीकृत होती जा रही दुनिया में बीज और फसल उत्पादन से लेकर प्राकृतिक संसाधन आधार तक और क्षेत्रीय बाजार पैदा करने से लेकर एक शैक्षिक साधन के रूप में मीडिया के सदुपयोग तक खाद्य शृंखला की स्वायत्तता बचाए रखना इस सोसायटी का एक मुख्य उद्देश्य है। यह स्वायत्तता महिलाओं के संगमों या स्वैच्छिक ग्राम स्तरीय संगठनों के सशक्तिकरण के जरिए हासिल की जा रही है। इन संगठनों में अधिकांशतः दलित महिलाएं होती हैं।

आंध्र प्रदेश के अनंतपुर जिले में टिम्बकटू कलेक्टिव भी इसी तरह के सिद्धांतों पर काम कर रहा है। इस कलेक्टिव की स्थापना नब्बे के दशक की शुरुआत में ग्रामीण स्वयं-सहायता समूहों के गठन के साथ की गई थी। ये समूह बचत और ऋण गतिविधियों पर केंद्रित थे। तब से अब तक कलेक्टिव खाद्य उत्पादन से लेकर साझा संसाधनों के प्रबंधन तक विविध प्रकार के छोटे-बड़े मुद्दों पर कोऑपरेटिव बनाने में सक्रिय रहा है।

गौर करने की बात यह है कि डीडीएस और टिम्बकटू कलेक्टिव, दोनों ही खुद को प्रचलित जैविक प्रमाणन से दूर रखे हुए हैं क्योंकि यह न केवल बेहद महंगी प्रक्रिया है बल्कि 'लाइसेंस राज' संस्कृति को भी बढ़ावा देती है। इसके स्थान पर इन संगठनों ने सहभागी गारंटी व्यवस्था (पार्टिसिपेटरी गारंटी सिस्टम - पीजीएस) की पद्धति अपनाई है जो कृषक-कृषक साथी समीक्षा, व्यक्तिगत सत्यनिष्ठा और परस्पर विश्वास के मूल्यों पर आधारित है।

रागी आंध्र प्रदेश के सूखाग्रस्त इलाकों में एक महत्वपूर्ण अनाज है।

जैविक मूंगफली तेल की बॉटलिंग के लिए टिम्बकटू कलेक्टिव द्वारा शुरू की गई इकाई।

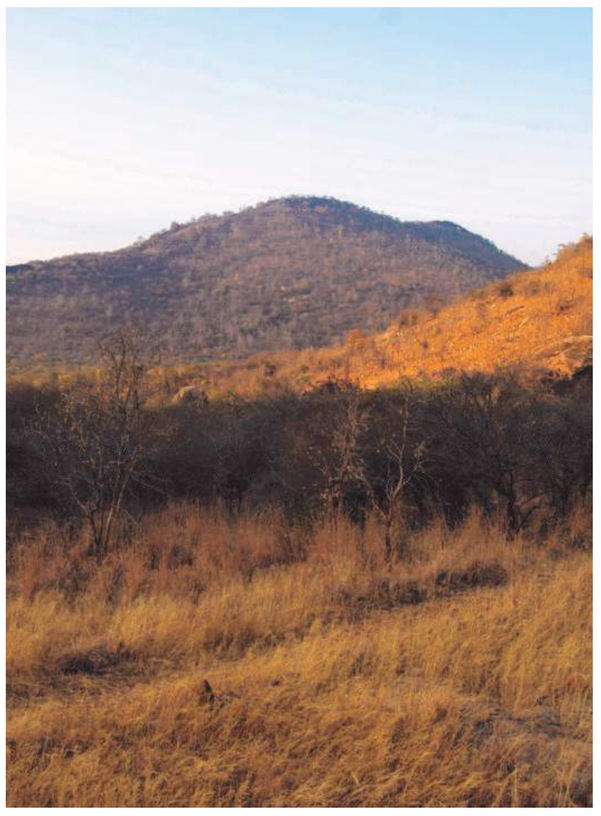

टिम्बकटू कलेक्टिव इस बात को भली-भांति समझता है कि साझा संसाधनों का प्रबंधन खाद्य स्वायत्तता के साथ निहित रूप से जुड़ा है।

भोजन और खेती (जारी)

बाएं: *सात्विक जिन बीजों को बचाने की कोशिश कर रहा है उनमें से कुछ पर लगे गुजराती लेबल।*
दाएं: *गुजरात स्थित कच्छ में मिलने वाली 'काला' कपास एक जैविक प्रजाति है। यह प्रजाति वर्षा आधारित है और इसको उगाने के लिए खेत में कोई रसायनिक खाद नहीं डालनी पड़ती। इस कपास को खमीर के माध्यम से बेचा जा रहा है।*

कृषि-पारिस्थितिकीय एवं सांस्कृतिक संदर्भ अलग-अलग इलाकों में अलग-अलग होते हैं। कच्छ के किसानों ने राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में कपास और अरंडी जैसी नकदी फसलों को प्राथमिकता दी है। यहां सक्रिय सात्विक संगठन ने एक द्विआयामी पद्धति अपनाई है। भुज में स्थित सात्विक एक तरफ तो खाद्य फसलों के लिए परंपरागत सूखारोधी बीज प्रजातियों की हिमायत करता है और दूसरी तरफ उसने नकदी फसलों के लिए थर्ड पार्टी जैविक प्रमाणन भी हासिल किया है। इससे किसानों को बाजार में अपना माल बेचने और खेती को औद्योगिक रसायनों से बचाने में मदद मिली है। सूचनाओं के प्रसार और प्रशिक्षण कार्यक्रमों के जरिए सात्विक ने 'बीज जनक' (सीड ब्रीडर) किसानों का एक समूह तैयार करने का प्रयास किया है। इस समूह में ऐसे किसान हैं जो रह-रह कर बुवाई और बीजों की अदला-बदली के जरिए बीजों की प्रजातियों को बचाए रखने का प्रयास करते हैं।

उत्तराखंड में सक्रिय माटी (देखें पन्ना १२) और बीज बचाओ आंदोलन भी अनौपचारिक आदान-प्रदान और चक्रीय बुवाई के जरिए बीज विविधता को बचाए रखने के उल्लेखनीय उदाहरण हैं।

'बैंक में बीजों का क्या मतलब, वे तो हाथों से गुजरने चाहिए और खेतों में उगने चाहिए।'

- शैलेष व्यास, सात्विक

भीमाशंकर, महाराष्ट्र में जंगल से प्राप्त खाद्य पदार्थों का उत्सव। जंगलों, आर्द्र भूमियों और घास के मैदानों से मिलने वाला जंगली आहार पोषण का बहुत महत्वपूर्ण स्रोत है।

मुन्स्यारी, उत्तराखंड में राजमा के बीजों की एक किस्म। यहां पर माटी संगठन सक्रिय है।

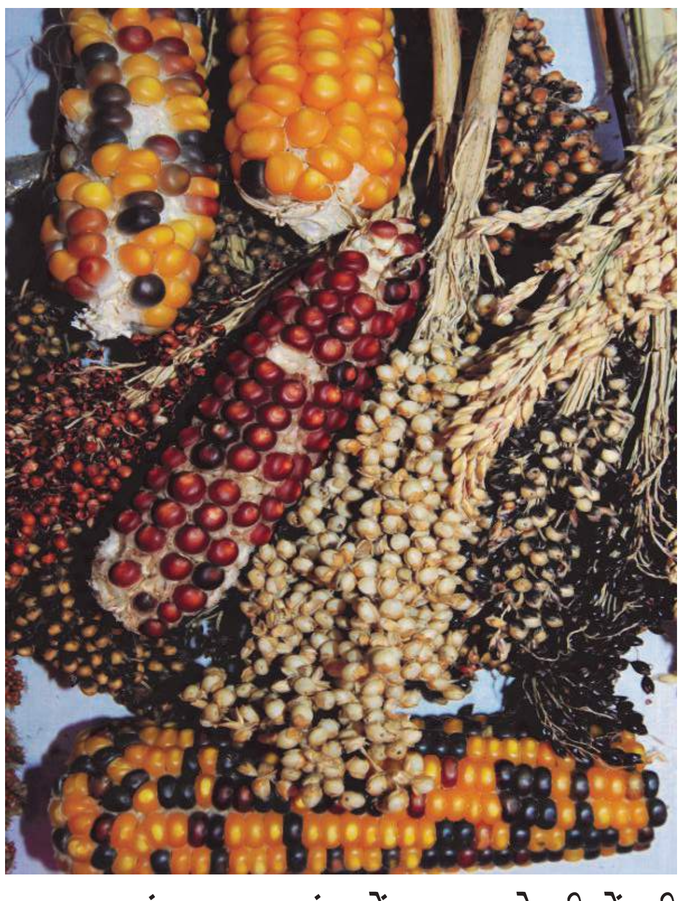

जरधर गांव, उत्तराखंड में मक्का के बीजों की विविधता। यहां बीज बचाओ आंदोलन सक्रिय है।

जंगली आहार

ऊपरः *स्लो फूड उत्सव, २०१५ में मेघालय में मनाये गए स्थानीय तेरा मादरे समारोह का एक अहम हिस्सा था। यहाँ उत्तर-पूर्व और विश्व भर के विभिन्न समुदायों ने ४० से अधिक स्थानीय आहार के स्टाल्स लगाये थे। यह खाद्य विविधता और ज्ञान सम्पदा का उत्सव था। ऊपर पश्चिम खासी हिल्स के डोमबाह गाँव के लोगों द्वारा लगायी स्टाल की तस्वीर है।*

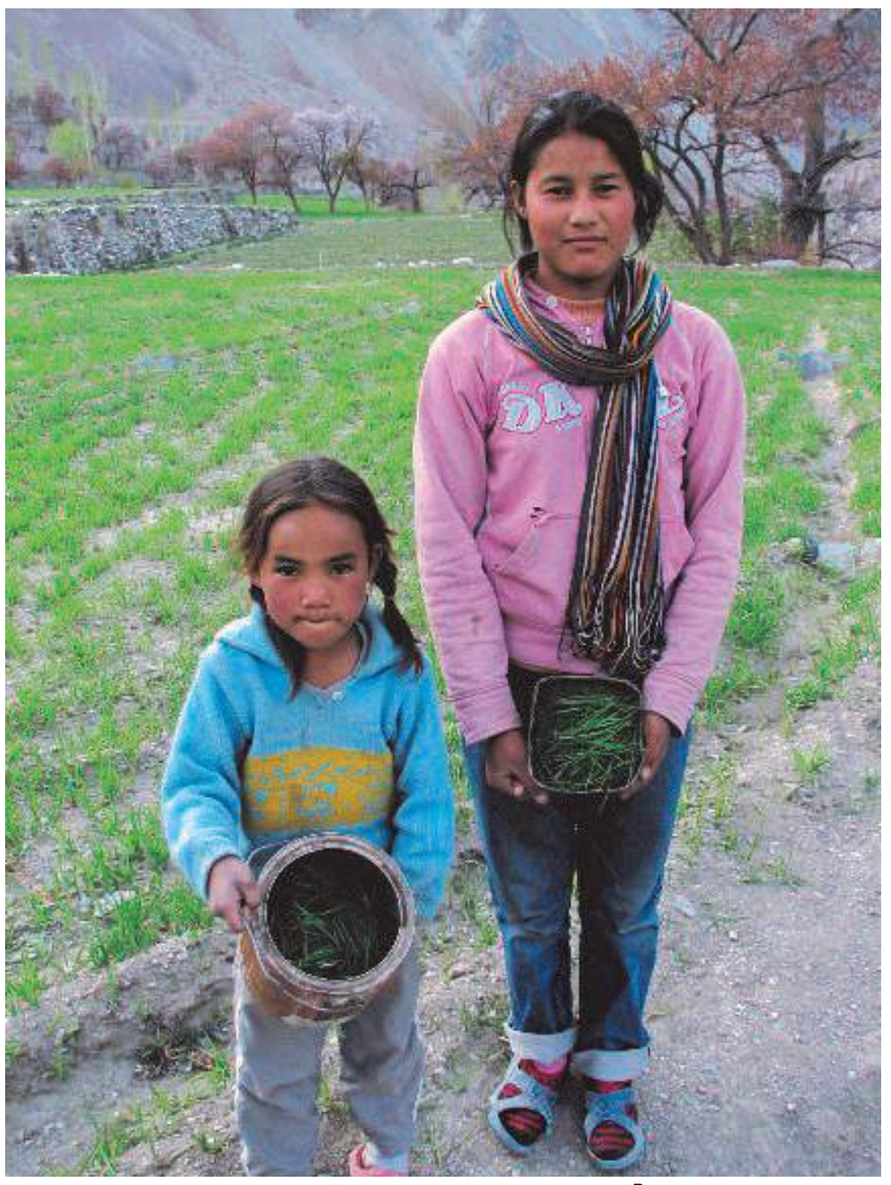

ऊपरः *बच्चे "क्यु" की फसल ले जा रहे हैं। इसे लद्दाख के जंगली इलाकों से काटा गया है।*

ऊपरः *घोंघे - जंगली आहार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। इन्हें मेघालय के स्थानीय तेरा मादरे आहार उत्सव में प्रदर्शित किया गया है।*

जंगली या बिना-उगाये आहार में अनेक प्रकार के पौधे शामिल हैं। इनमें पेड-पौधों की टहनियां, पत्तियां, फल-फूल, सब्जियां, जड, कंदमूल, और अन्य जीव जैसे मशरूम्स और कीडे-मकोडे भी शामिल हैं! ये आहार स्वादिष्ट, पौष्टिक और सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण होने के साथ-साथ, कडक सर्दी और अकाल में लोगों के जीवन का साधन भी बनते हैं। पारंपरिक वैद्य इन जंगली आहारों को बीमारियों के इलाज में उपयोग करते हैं।

ऊपरः *डेक्कन डेवलपमेंट सोसाइटी, तेलन्गाना की दलित महिलाओं द्वारा स्थानीय जंगली आहारो का मूल्यांकन और प्रदर्शन*

बाएंः *मुनिगुडा रेलवे स्टेशन पर बिकते जंगली-मशरूम्स। इन्हें डोंगरिया-कोंध जनजाति की महिलायों ने इकट्ठा किया है। ये उडीषा राज्य के नियमगिरि इलाके में रहती है।*

दाएँः *"सुदिनिया" (Clerodendrum colebrookianum) के पत्ते और फल उच्च रक्तचाप के रोग में लाभकारी हैं। इन्हें, नागालैंड की चिजामी जनजाति ने, २०१४ में दिल्ली में आयोजित जंगली आहार और पर्यावरण मेले में प्रदर्शित किया।*

मगनलाल अहीर

एक किसान का शब्दचित्र

हमें कुदरत के इशारे को, उसके द्वारा जाहिर किए गए सत्य को अपनाने में चूकना नहीं चाहिए।

– मगनलाल अहीर

एक वक्त था जब कच्छ के अंजार ब्लॉक में रहने वाले मगनलाल रियायती दरों पर मिलने वाले सरकारी उर्वरकों और कीटनाशकों का धड़ल्ले से इस्तेमाल किया करते थे। शुरुआती सालों में इससे उनकी उपज भी बढ़ी मगर धीरे-धीरे यह उपज गिरने लगी हालांकि अभी भी उनकी खेती घाटे में नहीं थी। कुछ और समय बीतने पर उन्हें दिखाई देने लगा कि अब मिट्टी पहले जितनी नमी नहीं सोख पाती है। उसमें जो सूक्ष्मजीवी होते थे वे मरते जा रहे थे। उन्होंने रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का रास्ता छोड़कर जैविक खेती के रास्ते पर चलने का फैसला लिया।

नए रास्ते पर चलना कठिन था क्योंकि उनकी मिट्टी औद्योगिक रासायनों की आदी हो चुकी थी। मगनलाल के पास गाय-भैंसें थीं और वह उनके गोबर की खाद से मिट्टी को फिर से पुनर्जीवित करने लगे। बार-बार फसलों को बदलते और कई बार महीनों के लिए कुछ जमीन को खाली भी छोड़ देते थे।

उन्होंने कीट-पतंगों और कीटभक्षियों की कुदरती शृंखला को पुनर्जीवित करने के लिए अपने खेतों के आसपास पेड़ भी उगाए (दाएं)। इसके बाद एक कमाल की चीज हुई – सूक्ष्मजीवी जमीन में लौटने लगे। अब मिट्टी में फिर से पानी ठहरने लगा। उनकी जमीन को पुरानी सेहत हासिल करने में छह से आठ साल का समय तो लगा मगर मगनलाल ने धीरज का दामन नहीं छोड़ा। उन्हीं के मुताबिक, अब उन्हें फिर अपनी खेती से उतनी ही कमाई होने लगी है जितनी तब होती थी जब वे औद्योगिक रसायनों का इस्तेमाल कर रहे थे। अब उन्हें कुदरती चक्र को बहाल होते देख कर एक अलग किस्म का संतोष मिल रहा है।

सामुदायिक संरक्षण

हमारे जंगल व अन्य प्राकृतिक क्षेत्र (ecosystems) करोड़ों लोगों को जीवन का आधार और आजीविका प्रदान कर रहे हैं। इनसे हमारी खेती, पशुपालन, गैर-लकड़ी वन उपज और विविध संस्कृतियों को बल व पोषण मिलता है। आज हमारे यही प्राकृतिक क्षेत्र समुदायों के भीतर और बाहर, दोनों तरफ से कठिन चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। जंगलों का संरक्षण अकसर तभी कामयाब होता है जब उनका इस्तेमाल करने वाले समुदाय खुद उनके संरक्षण में भरपूर योगदान देते हों।

ऊपरः जड़धारगांव, उत्तराखंड में वन सुरक्षा समिति की एक बैठक का दृश्य।

उत्तराखंड स्थित टिहरी गढ़वाल का जड़धारगांव इसका एक बढ़िया उदाहरण है। सत्तर के दशक में चले चिपको आंदोलन से प्रेरणा लेकर हिमालय के निचले पहाड़ों में स्थित इस गांव के लोगों ने एक वन सुरक्षा समिति का गठन किया है ताकि लकड़ी और घास-फूंस के इस्तेमाल को नियमित किया जा सके और गांव के सभी परिवारों के बीच इन संसाधनों का समान वितरण सुनिश्चित किया जा सके। इस समिति के सदस्य ग्राम सभा की बैठक में आम सहमति के आधार पर चुने जाते हैं न कि वोटों के आधार पर। चूना पत्थर की भरमार वाले इस इलाके में खनन के बाहरी खतरों से निपटने के लिए महिलाओं की समिति भी बनाई गई है।

ऊपरः जड़धारगांव के लोग जंगल में लगी आग बुझा रहे हैं।

महाराष्ट्र का हिवरे बाजार (नीचे) कृषि-वन समुच्चय पर आधारित एक समग्र सोच का उदाहरण है। यह सोच नशा, चरल (स्वतंत्र चराई), कुल्हड़ (पेड़ों की बेतहाशा कटाई) और नस (जनसंख्या वृद्धि) की बंदी यानी रोक पर आधारित है।

ऊपरः जड़धारगांव के आसपास पुनर्जीवित किए गए जंगल।

तब

अब

***बाएं से दाएंः** हिवरे बाजार, महाराष्ट्र में सामुदायिक सक्रियता के फलस्वरूप आए ऐतिहासिक बदलाव।*

सामुदायिक संरक्षण (जारी)

सन् २००६ से वन अधिकार अधिनियम ने न केवल कई वन आश्रित समुदायों को अपने परंपरागत वन संसाधनों पर अधिकारपूर्वक इस्तेमाल का मौका दिया है बल्कि उन्हें इन संसाधनों के संरक्षण का दायित्व भी सौंपा है। इसके माध्यम से २०१४ के आखिर तक विभिन्न समुदाय दो लाख एकड़ से ज्यादा जंगलों को पुनर्जीवित या संरक्षित कर चुके थे।

महाराष्ट्र के नयाखेड़ा गांव में खोज ने इस कानून के अंतर्गत सामुदायिक वन अधिकार के लिए लोगों के आवेदन जमा कराए और आखिरकार २०१२ में गांव को इस मद में मंजूरी मिली। तब से समुदाय के लोगों ने ६०० हैक्टेयर से ज्यादा जंगलों की सुरक्षा के लिए कई अहम कदम उठाए हैं जिनमें यहां शिकार पर पाबंदी और जलावन के लिए पूरे के पूरे पेड़ों को काटने पर पाबंदी भी शामिल है। अगर कोई व्यक्ति चराई के लिए निषिद्ध इलाके में मवेशियों को चराता पाया जाता है तो उस पर जुर्माना भी लगाया जाता है। जंगल की आग को रोकने के लिए भी कदम उठाए गए हैं।

ऊपरः *महाराष्ट्र के नयाखेड़ा गांव में चरागाह और जंगल का सहअस्तित्व जिसे वन अधिकार अधिनियम के माध्यम से स्थानीय समुदाय कानूनन सुरक्षा प्रदान कर रहा है।*

ऊपरः *मंगलाजोड़ी, ओडिशा में मनुष्यों और पक्षियों का सह-अस्तित्व।*

बाएं से दाएं : *मंगलाजोड़ी की आर्द्र भूमि में पाई जाने वाली तकरीबन २०० प्रजातियों में से purple moorhen और cinnamon bittern दो सबसे दिलकश परिंदें हैं।*

जंगलों को बचाने की यह सोच इंसानी इस्तेमाल के लिए मिलने वाले संसाधनों की आवश्यकता तक ही सीमित नहीं है बल्कि स्वयं जंगलों को बचाए रखने के महत्व पर भी आधारित है।

ओड़िशा की मशहूर चिलका झील के किनारे बसा मंगलाजोड़ी गांव इसी समझ का एक उदाहरण है जहां अब वही ग्रामीण लोग आर्द्र भूमियों में पाए जाने वाले पक्षियों का संरक्षण करने लगे हैं जो पहले उनका शिकार किया करते थे। यह कोशिश वाइल्ड ओडिशा द्वारा शुरू की गई थी जिसने इस रूपांतरण के लिए सांस्कृतिक और नैतिक तर्क का सहारा लिया और तत्पश्चात स्थानीय लोगों को गाइड के रूप में प्रशिक्षण दिया। इस रूपांतरण का एक दिलचस्प पहलू यह है कि आर्द्र भूमि में केवल शिकार पर पाबंदी लगाई गई है, मवेशियों को चराने और मछली पकड़ने पर कोई पाबंदी नहीं है क्योंकि इससे पक्षियों को भी फायदा होता है।

पुणे स्थित कल्पवृक्ष द्वारा एक डायरेक्टरी प्रकाशित की गई है जो समुदाय संरक्षित क्षेत्रों का दुनिया का पहला देशव्यापी संकलन और विश्लेषण है। इसमें ऐसे असंख्य प्रयासों का ब्यौरा दिया गया है ताकि जैवविविधता, स्थानीय आजीविकाओं, जनअधिकारों और विकास को बचाए रखने के लिए एक ज्यादा गहरी समझ हासिल की जा सके। इस डायरेक्टरी में देश के २३ राज्यों के १४० प्रयासों का ब्यौरा दिया गया है।

ऊपरः *पूरे देश में सामुदायिक संरक्षण प्रयासों की झलक पेश करने वाला कल्पवृक्ष द्वारा रचा गया एक पोस्टर।*

शिक्षा और सीख

बाएं: *फ़े, लद्दाख में सेकमोल परिसर की इमारतें निष्क्रिय सौर वास्तुशिल्प के सिद्धांतों के आधार पर खड़ी की गई हैं। इन्हें कड़ाके की सर्दियों में भी अतिरिक्त ताप की आवश्यकता नहीं पड़ती। सौर ऊर्जा के इस्तेमाल की बदौलत यह परिसर विद्युत ग्रिड से स्वतंत्र है।*
दाएं: *सेकमोल स्किल्स युनिवर्सिटी (कौशल विश्वविद्यालय) स्थानीय युवाओं को पुनर्नवीकरणीय ऊर्जा और Rammed Earth Building का प्रशिक्षण देता है।*

मुख्यधारा की आधुनिक शिक्षा की विफलताओं को गिनवाने की कोई जरूरत नहीं है। यह शिक्षा दब्बूपन और अतिप्रतिस्पर्धा की संस्कृति को जन्म देती है और कॉरपोरेट मूल्यों से खुराक लेती है।

स्टुडेंट्स एजुकेशनल ऐण्ड कल्चरल मूवमेंट ऑफ लद्दाख (सेकमोल) इस सोच और इन मूल्यों से परे है। यह संगठन व्यक्तिगत चयन और रचनाशीलता को सींचने वाली, स्थानीय स्तर पर उपयोगी प्रौद्योगिकी के सृजन में योगदान देने वाली, स्थानीय स्तर पर प्रासंगिक शैक्षिक सामग्री तैयार करने वाली और बौद्धिक व शारीरिक, दोनों प्रकार के श्रम को पर्याप्त सम्मान देने वाली सोच पर आधारित शिक्षा देता है। सेकमोल का काम अस्सी के दशक में शुरू हुआ था। यह मुख्यधारा की शिक्षा व्यवस्था में लद्दाखी विद्यार्थियों के विफल होते जाने के खिलाफ एक प्रतिक्रिया थी।

एक संगीतीय कार्यशाला में सेकमोल के विद्यार्थी।

आंध्र प्रदेश में डेक्कन डेवलेपमेंट सोसायटी द्वारा चलाए जा रहे पाचशाले (यानी धरती विद्यालय) की पाठ्यचर्या में बढ़ईगीरी, दर्ज़ीसाज़ी, बुक बाइंडिंग, परमाकल्चर और पॉटरी का व्यावहारिक कौशल एक अहम हिस्सा है। इसके अलावा यहां भाषा, विज्ञान और गणित जैसे प्रचलित विषयों की शिक्षा तो दी ही जाती है।

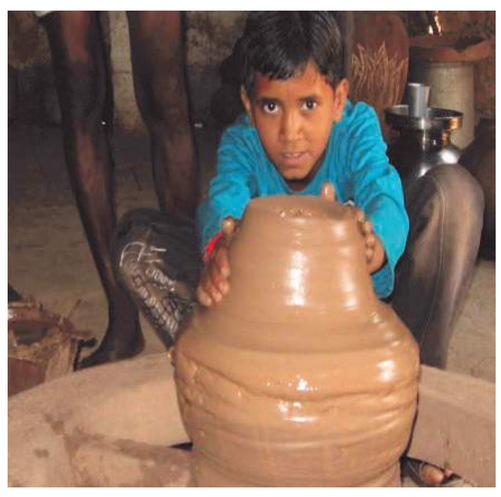

पाचाशाले के विद्यार्थी किताबों का ज्ञान और हाथ के काम, दोनों सीखते हैं।

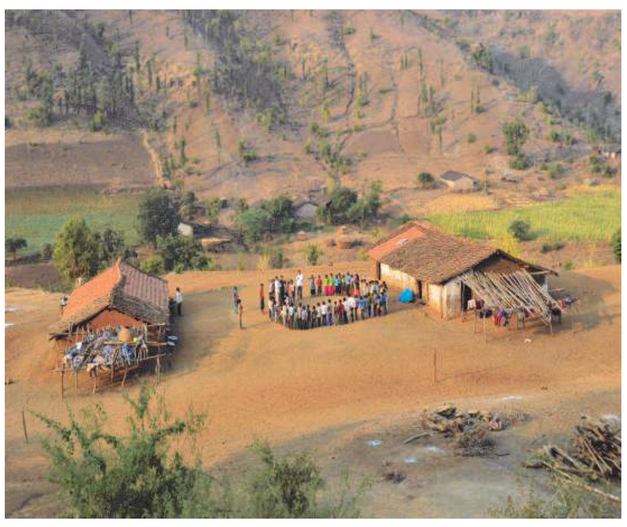

बाएं: *भिताड़ा, मध्य प्रदेश में एक जीवनशाला स्कूल।*
दाएं: *मणिबेली, महाराष्ट्र में बच्चे एक जीवनशाला में कठपुतलियों से खेल रहे हैं।*

नर्मदा घाटी में नर्मदा बचाओ आंदोलन द्वारा चलाए जा रहे जीवनशाला स्कूल जबरिया विस्थापन के खिलाफ स्थानीय समुदायों के संघर्ष से पैदा हुए थे। जनजातीय जीवन के ज्ञान और प्रतिष्ठा पर आधारित शिक्षा के जरिए ये स्कूल बच्चों को अपनी संस्कृति से जोड़ने में भी मदद देते हैं और उन्हें उस वृहत्तर राजनीतिक व्यवस्था के प्रति अवगत भी कराते हैं जिसका वे हिस्सा हैं।

शिक्षा और सीख (जारी)

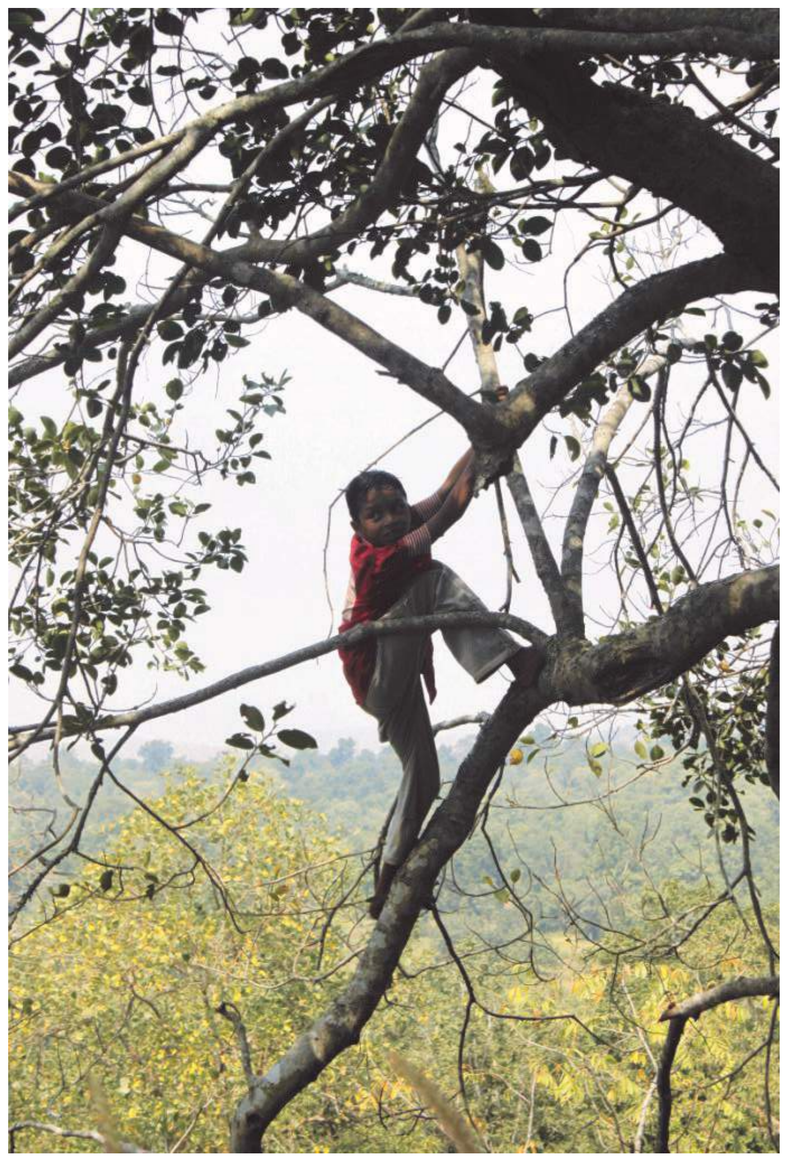

घडी की दिशा में: *सुबह-सुबह योग, मिट्टी के बर्तन बनाना, बाहर खोज-बीन और खेती का काम, इमली-महुआ स्कूल, गाँव बलेंगापारा, कोंडागांव, छत्तीसगढ।*

"हममें से बहुत कम लोग ही स्कूल में पढने-लिखने, गणित या विज्ञान सीखने आते हैं। हम यहाँ पर साहस भरी कहानियां सुनने और दूर-देशों की किताबें पढने आते हैं, मिट्टी और बालू से खेलने, लम्बी चारदीवारी पर सैर करने, चित्रकारी और खेलने, पिकनिक मनाने, गीत-गाने और अपने मित्रों के साथ बतियानें आते हैं। हरेक बच्चा स्कूल में खेलता है और केवल वो चीज़ें करता है जिसमें उसे मज़ा आता है। स्कूल बच्चों के व्यक्तित्व का आदर करता है।" – इमली-महुआ स्कूल के बच्चे। यह ग्रामीण स्कूल छत्तीसगढ के आदिवासी क्षेत्र में स्थित है। स्कूल, बच्चों के हाथों में खुद की पढाई की ज़िम्मेदारी सौंपता है। स्कूल में स्वतंत्र सोच का माहौल है। क्या सीखना है? यह बच्चे खुद तय करते हैं और बड़ों की मदद से वो उसे संपन्न करते हैं।

दूसरी ओर तिरुवन्नामलई, तमिलनाडु स्थित, मरुदम फार्म स्कूल में नियमित कक्षाएं लगती हैं। पर इस ढांचे में भी बच्चों को यह आज़ादी है कि वह क्रियात्मक ढंग से कला, क्राफ्ट, नाटक और बाहरी गतिविधियों को प्रोजेक्टस और अनुभव करके सीख सकें। स्कूल विभिन्न पृष्ठभूमियों के शिक्षकों और बच्चों को, एक-साथ एक "सम्मिलित" महडल में लाने की चेष्ठा करता है।

घडी की दिशा में: *मरुदम फार्म स्कूल में बच्चे व्यक्तिगत सीख के साथ-साथ, सिलाई-कढ़ाई, अपने परिवेश की खोजबीन, फिल्म बनाने और संगीत जैसी सामूहिक गतिविधियों को भी आसानी से कर पाते हैं।*

महिला सशक्तिकरण

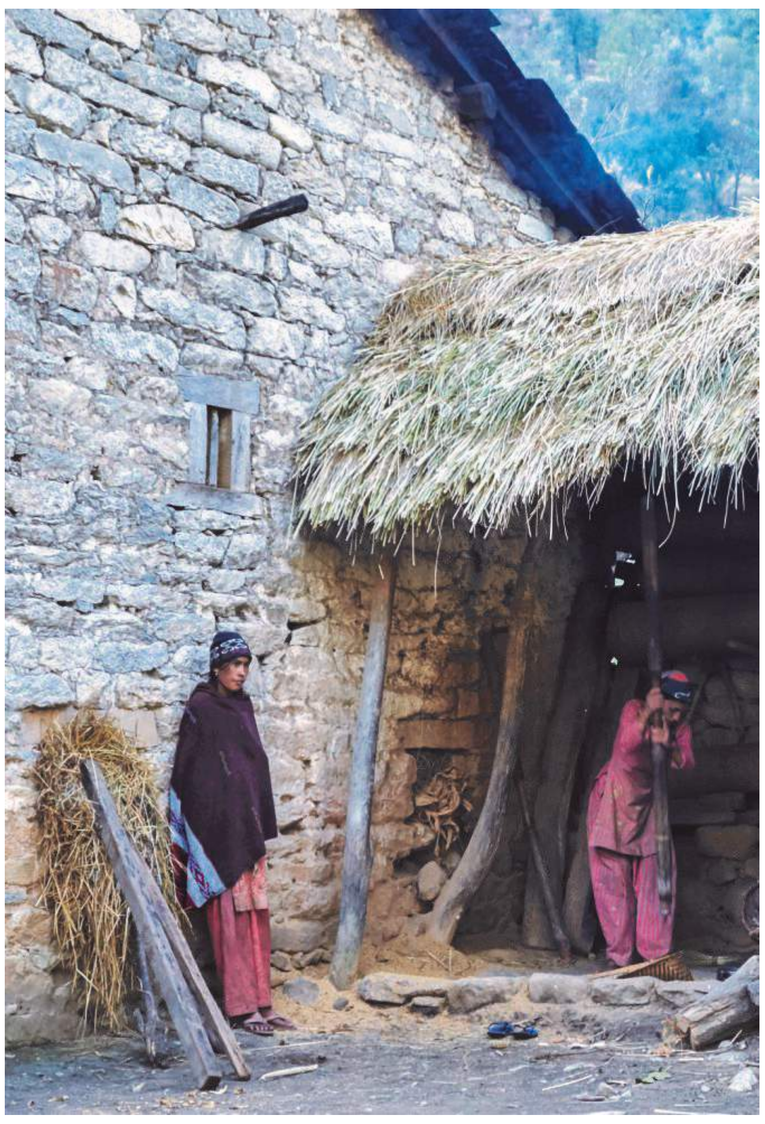

बाएं: *महिलाएं अभी भी हमारे ग्रामीण जीवन का आधार हैं। घरेलू कामों, खेती और संसाधन प्रबंधन में वे भारी योगदान दे रही हैं। अब वे न केवल राजनीति में हिस्सा लेने लगी हैं बल्कि सामाजिक परिवर्तन की वाहक भी बनती जा रही हैं।*

मध्य: *सरमौली, उत्तराखंड में माटी संगठन की सदस्याएं।*

दाएं: *माटी की सदस्य पुष्पा इसी इलाके में मिलने वाली भेड़ की ऊन से 'आसन' बना रही हैं।*

सरमौली, उत्तराखंड में सक्रिय माटी लगभग २० महिलाओं का संगठन है। ये महिलाएं मूल रूप से घरेलू हिंसा का विरोध करने के लिए एकजुट हुई थीं। इसके बाद वे स्थानीय राजनीति में सहभागिता, अपने वन एवं जल संसाधनों के प्रबंधन और बीज विविधता आधारित खेती में सहभागिता के जरिए न केवल प्रत्यक्ष लोकतंत्र का जीता-जागता उदाहरण बन चुकी हैं बल्कि होमस्टे पर आधारित न्यून-प्रभाव पर्यटन के सहारे अपनी आजीविका में इजाफा भी कर रही हैं।

इस शृंखला के दूसरे छोर पर केरल के कुदुंबश्री प्रयोग को रखा जा सकता है। यह एक विशाल सरकारी कार्यक्रम है जो नीचे से ऊपर की ओर (व्यक्ति, मोहल्ला, जिला) केंद्रित अभिशासन संरचना के जरिए महिलाओं के सशक्तिकरण पर जोर देता है। कुदुंबश्री की ओर से महिलाओं को लघु उद्यमों के लिए प्रशिक्षण, नेटवर्किंग और मार्केटिंग सहातया भी प्रदान की जाती है। यद्यपि यह कार्यक्रम महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में एक मिसालिया कामयाबी रहा है मगर अभी भी स्थानीय स्तर पर कच्चा माल जुटाना और उत्पादों की स्थानीय बाजारों में खपत सुनिश्चित करना एक बड़ी चुनौती बनी हुई है।

बाएं से दाएं : *तिरुअनंतपुरम जिले में एक कपड़ा बुनकर महिला तथा कुदुंबश्री नेटवर्क से जुड़ी कोच्ची स्थित न्यूट्रीमिक्स आहार उत्पाद इकाई में कार्यरत महिलाओं का एक समूह।*

विकेंद्रीकृत अभिशासन

मेंढा लेखा में एक सभा का दृश्य।

मेंढ़ा लेखा में कृषि भूमि और मछली (व अन्य प्राकृतिक संसाधन) भी अब सामूहिक स्वामित्व के अंतर्गत आते हैं।

नागालैंड में सरकार द्वारा पूरे राज्य में सरकारी सेवाओं की डिलीवरी के रास्ते में आने वाली कठिनाइयों को समझने के लिए बहुत सारी कार्यशालाएं आयोजित की गईं थी। इससे कल्याण योजनाओं के निजीकरण की बजाय उनके सामुदायिकीकरण का सिलसिला शुरू हुआ था। इस प्रक्रिया के तहत समुदाय के लोग स्वास्थ्य (परंपरागत उपचार पद्धतियों सहित), शिक्षा और बिजली जैसे विभिन्न क्षेत्रों का स्वामित्व और प्रबंधन खुद संभाल सकते हैं।

मेंढा लेखा, नागालैंड में सामुदायिकीकरण तथा पुणे (पन्ना १७) में सहभागी बजटिंग जैसे उदाहरण एक वैकल्पिक राजनीति की आवश्यकता को दर्शाते हैं जो प्रत्यक्ष और प्रतिनिधित्व आधारित लोकतंत्र पर केंद्रित हो और जिसमें निर्णय प्रक्रिया आबादी की सबसे न्यूनतम इकाइयों से शुरू हो, जिसमें हर व्यक्ति के पास निर्णय प्रक्रिया में हिस्सा लेने का अधिकार, सामर्थ्य और अवसर हो और जो वंचित तबकों की जरूरतों और अधिकारों का सम्मान कर सके। इस तरह की राजनीति व्यक्तियों को उचित स्थान तो देगी मगर उन्हें इस स्थान को सामाजिक एवं पर्यावरणीय न्याय की सामूहिक प्राथमिकताओं की तरफ जिम्मेदारी निभाते हुए ग्रहण करना होगा।

‘मुंबई और दिल्ली की सरकार तो हम सिर्फ चुनते हैं जबकि मेंढ़ा-लेखा में हम *खुद ही* सरकार हैं!’

महाराष्ट्र का मेंढ़ा-लेखा गांव अपने जंगल पर सामुदायिक अधिकारों की कानूनी लड़ाई जीतने वाले पहले दो गांवों में से एक था। इस गांव के आदिवासी समुदाय अपने प्राकृतिक संसाधनों के टिकाऊ इस्तेमाल के जरिए ठीक-ठाक आमदनी तो हासिल कर ही रहे हैं, इस संपदा का गांव के पुनर्निर्माण के लिए भी समतापूर्वक इस्तेमाल करते हैं। हाल ही में गांव के सभी निवासियों ने स्वेच्छापूर्वक अपनी सारी खेतिहर जमीन ग्राम सभा को सौंप दी है ताकि इन महत्वपूर्ण संसाधनों के निजी स्वामित्व को रोका जा सके।

इस फैसले ने ग्राम सभा को भी और मजबूती दी है। इससे ग्राम सभा को भोजन, पानी, आवास और शिक्षा के सामूहिक हितों पर गांव के भीतर और बाहर से पैदा हो रहे खतरों से निपटने की ताकत मिली है।

सेंडेन्यू, नागालैंड में परंपरागत उपचारकों का एक समूह।

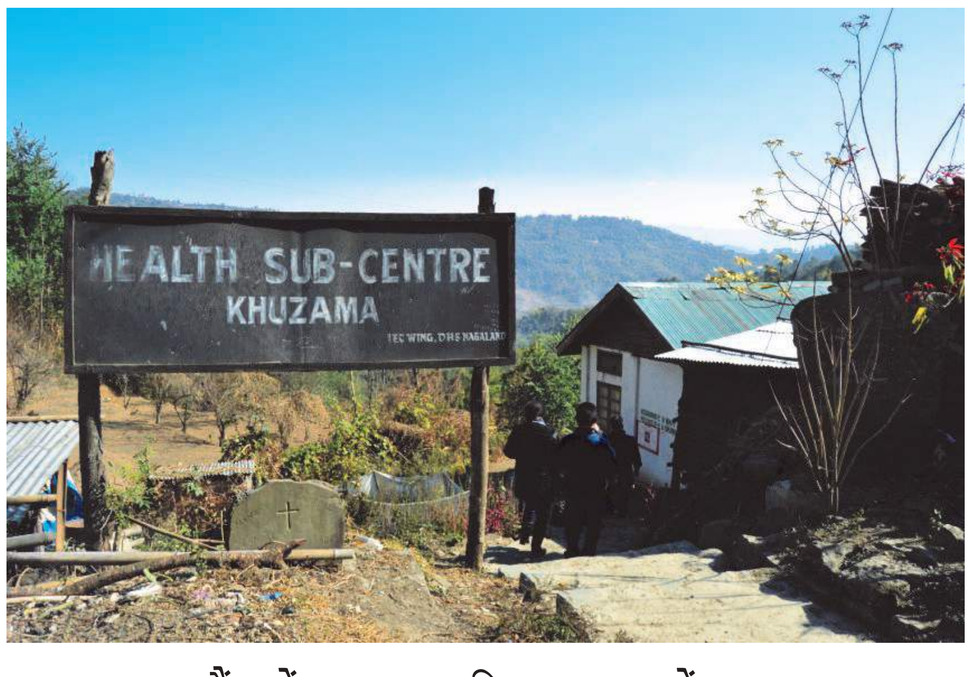

खुज़मा, नागालैंड में एक सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र।

शहरी टिकाऊपन और स्वावलंबन

बाएं एवं मध्यः *पुणे, महाराष्ट्र में* ***स्वच्छ*** *की महिलाएं अपने दैनिक अभियान पर। वे जैविक और अजैविक कचरे की छंटाई के लिए अलग-अलग रंगों की बाल्टियों का इस्तेमाल करती हैं।*
दाएंः *पुणे में स्वच्छ का एक कचरा संग्रह केंद्र; इसकी दीवार पर जो चित्र बना है उसमें गीले और सूखे कचरे की छंटाई के बारे में अपील की गई है।*

स्वच्छ पुणे में स्वरोजगारी कचरा बीनने वालों, कचरा इकट्ठा करने वालों और अन्य व्यवसायों में लगे शहरी गरीबों का एक कोऑपरेटिव है। ये लोग घरों और दफ्तरों में पैदा होने वाले कचरे को एकत्र करके उसके निस्तारण और रीसाइक्लिंग तक शहरी कचरा चक्र से जुड़े हुए हैं। इन मेहनतकशों के अथक अभियान से न केवल बेहतर कचरा प्रबंधन की व्यवस्था अस्तित्व में आई है बल्कि कचरा बीनने वालों के मुद्दों पर नई जागरूकता भी पैदा हुई है और एक ज्यादा सम्मानजनक जीवन के लिए उनका सशक्तिकरण हुआ है।

मगर ये लोग सिर्फ यहीं तक जा सकते हैं। कचरे के मुद्दे पर शहरों में आज एक इससे भी बड़े आंदोलन की जरूरत है ताकि सबसे पहले कचरे का उत्पादन कम किया जाए, पैकेजिंग को रोका जाए या उसके नए तरीके ढूंढे जाएं और अंततः बेतहाशा उपभोग पर आश्रित अर्थव्यवस्था के रूपांतरण का रास्ता ढूंढा जाए।

बाएंः *अब्दासा, कच्छ में पानी को रोकने के लिए बनाए गए छोटे-छोटे चैक डेम।*

दूर बाएंः *अब्दासा, कच्छ स्थित बेरा-हाड़फर में पुनर्जीवित किया गया एक कुआं।*

कच्छ के कई दर्जन गांवों ने यह साबित कर दिया है कि देश के सबसे कम वर्षा वाले इलाके में भी वर्षा जल के सावधानीपूर्वक संचय, प्रबंधन और इस्तेमाल से सारी स्थानीय जरूरतें पूरी की जा सकती हैं। यहां परंपरागत और आधुनिक हाइड्रोलॉजिकल ज्ञान को मिलाकर या तो पुरानी प्रणालियों को पुनर्जीवित किया गया है या नई प्रणालियां विकसित की गई हैं।

इस तरह की जल सुरक्षा एवं आत्मनिर्भरता भुज शहर की कई गरीब बस्तियों में भी हासिल की जा चुकी है। इसके लिए परंपरागत जल संचय संरचनाओं को बहाल किया गया है और पानी के समतापरक और टिकाऊ इस्तेमाल के लिए जल प्रबंधन समितियों का गठन किया गया है।

इन दोनों ही उदाहरणों में सहजीवन, एरिड कम्युनिटीज़ ऐण्ड टेक्नोलॉजीज़ (एसीटी), कच्छ महिला विकास संगठन (केएमवीएस) तथा कच्छ नवनिर्माण अभियान से संबद्ध अर्बन सेतु जैसे स्वैच्छिक संगठनों से समुदायों को भरपूर मदद मिली है।

दाएंः *भुज में कुओं और झीलों को रीचार्ज करने का तरीका।*

मध्य एवं दूर दाएंः *भुज की झुग्गी बस्तियों में सामुदायिक जल व्यवस्था।*

शहरी टिकाऊपन और स्वावलंबन (जारी)

बेंगलूरू, कर्नाटक की काईकोंद्रहल्ली झील सामुदायिक सरगर्मियों के माध्यम से पुनर्जीवित की जा चुकी है।

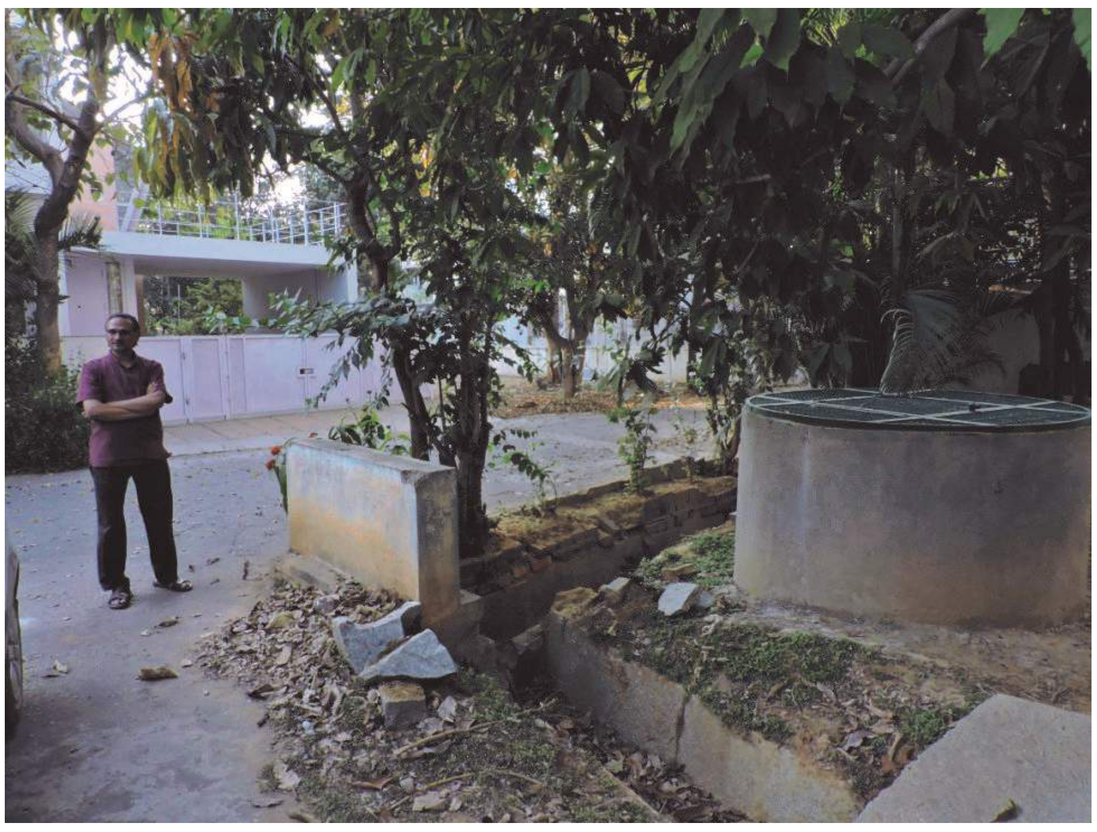

रेनबो ड्राइव कॉलोनी, बंगलूरू में स्थित एक जल संचय टंकी।

कुछ साल पहले तक बेंगलूरू शहर में स्थित काईकोंद्रहल्ली झील भी देश भर के शहरी जलाशयों के सामने पेश आ रही बहुत सारी समस्याओं से जूझ रही थी। इनमें झील के किनारे पर खड़ी की जा रही इमारतों की घुसपैठ, झील में कचरा फेंकने और त्यौहारों के दौरान धार्मिक सामग्री को पानी में प्रवाहित करने जैसी समस्याएं प्रमुख थीं।

२००६ की शुरुआत में अलग-अलग पृष्ठभूमि वाले नागरिकों, निजी दाताओं और स्थानीय प्रशासन ने मिलकर इस झील को पुनर्जीवित करने के लिए उसकी गाद की निकासी और धार्मिक गतिविधियों के लिए वैकल्पिक जलाशयों के बंदोबस्त जैसी गतिविधियां शुरू कीं। अब काईकोंद्रहल्ली आसपास के गांवों के लिए चारे का स्रोत है, शहरी सैलानियों के लिए सैर की जगह है और असंख्य पशु-पक्षियों के लिए बसेरा है। यह सफलता कभी झीलों के शहर के नाम से मशहूर रह चुके बेंगलुरू में जल संसाधनों की शृंखला को बहाल करने के एक व्यापक प्रयास का हिस्सा है।

इस अभियान के तहत इस बात को मान्यता दी गई है कि झीलों के बचाव की कोशिशें सबसे पहले गंदे पानी और कचरे के उद्गम यानी हमारे घरों, बस्तियों और दफ्तरों से ही शुरू होनी चाहिए। फलस्वरूप, अब बेंगलूरू स्थित ३०० से ज्यादा परिवारों वाली रेनबो ड्राइव कॉलोनी के प्रत्येक घर में वर्षा जल का संचय किया जा रहा है, गंदे पानी का उपचार और रीसाइक्लिंग की जा रही है, गीले कचरे की कम्पोस्टिंग की जा रही है और ठोस कचरे की रीसाइक्लिंग की जा रही है। यह प्रयास खुद यहां के निवासियों ने शुरू किया था और आज भी मिल-जुल कर चला रहे हैं।

महाराष्ट्र स्थित पुणे शहर में बजट आवंटन की निर्णय प्रक्रिया के विकेंद्रीकरण का एक अनूठा प्रयास किया जा रहा है। यहां के नागरिकों ने खुद यह तय करने का हक कुछ हद तक हासिल किया है कि टहलने और साइकिल चलाने, खेल के मैदान और बाग-बगीचे बनाने, कचरे और पानी का उपचार करने, बस स्टॉप्स बनाने, वृक्षारोपण करने आदि सहित कौन-कौन सी शहरी आवश्यकताओं पर कहां, कितना पैसा खर्च किया जाना चाहिए।

सेंटर फॉर एनवायर्नमेंट एजुकेशन (सीईई) द्वारा जारी किए गए इस पोस्टर (दाएं) में सहभागी बजट की मासिक प्रक्रिया का ब्यौरा दिया गया है।

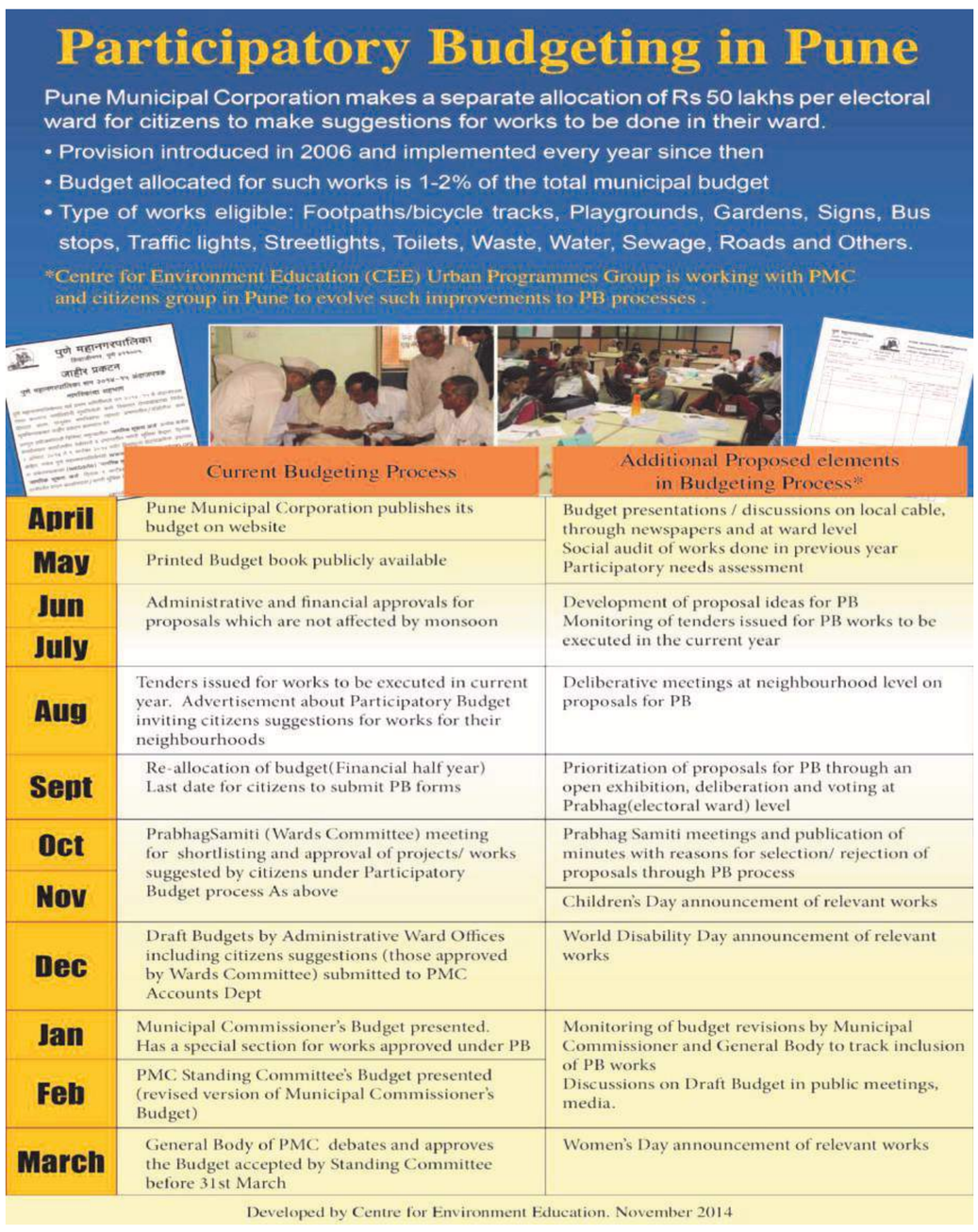

Participatory Budgeting in Pune

Pune Municipal Corporation makes a separate allocation of Rs 50 lakhs per electoral ward for citizens to make suggestions for works to be done in their ward.

- Provision introduced in 2006 and implemented every year since then
- Budget allocated for such works is 1-2% of the total municipal budget
- Type of works eligible: Footpaths/bicycle tracks, Playgrounds, Gardens, Signs, Bus stops, Traffic lights, Streetlights, Toilets, Waste, Water, Sewage, Roads and Others.

*Centre for Environment Education (CEE) Urban Programmes Group is working with PMC and citizens group in Pune to evolve such improvements to PB processes .

	Current Budgeting Process	Additional Proposed elements in Budgeting Process*
April	Pune Municipal Corporation publishes its budget on website	Budget presentations / discussions on local cable, through newspapers and at ward level Social audit of works done in previous year Participatory needs assessment
May	Printed Budget book publicly available	
Jun	Administrative and financial approvals for proposals which are not affected by monsoon	Development of proposal ideas for PB Monitoring of tenders issued for PB works to be executed in the current year
July		
Aug	Tenders issued for works to be executed in current year. Advertisement about Participatory Budget inviting citizens suggestions for works for their neighbourhoods	Deliberative meetings at neighbourhood level on proposals for PB
Sept	Re-allocation of budget(Financial half year) Last date for citizens to submit PB forms	Prioritization of proposals for PB through an open exhibition, deliberation and voting at Prabhag(electoral ward) level
Oct	PrabhagSamiti (Wards Committee) meeting for shortlisting and approval of projects/ works suggested by citizens under Participatory Budget process As above	Prabhag Samiti meetings and publication of minutes with reasons for selection/ rejection of proposals through PB process
Nov		Children's Day announcement of relevant works
Dec	Draft Budgets by Administrative Ward Offices including citizens suggestions (those approved by Wards Committee) submitted to PMC Accounts Dept	World Disability Day announcement of relevant works
Jan	Municipal Commissioner's Budget presented. Has a special section for works approved under PB	Monitoring of budget revisions by Municipal Commissioner and General Body to track inclusion of PB works Discussions on Draft Budget in public meetings, media.
Feb	PMC Standing Committee's Budget presented (revised version of Municipal Commissioner's Budget)	
March	General Body of PMC debates and approves the Budget accepted by Standing Committee before 31st March	Women's Day announcement of relevant works

Developed by Centre for Environment Education. November 2014

ऊर्जा

बिहार स्थित धरनाइ गांव के बच्चे। यह गांव ग्रीनपीस इंडिया द्वारा स्थापित किए गए एक माइक्रो ग्रिड के जरिए पूरी तरह सौर ऊर्जा के सहारे चल रहा है।

धरनाइ गांव में सौर ऊर्जाचालित स्ट्रीट लाईट।

स्थानीयकरण और केंद्रीकरण का भेद अगर कहीं सबसे स्पष्ट दिखाई देता है तो इस बात में कि विद्युत ऊर्जा का उत्पादन किस तरह किया जा रहा है। यहां तक कि जिन ऊर्जा स्रोतों को पहले वैकल्पिक ऊर्जा स्रोत माना जाता था - जैसे सौर एवं पवन ऊर्जा - वे भी भारी उत्पादन और डिजाइन व क्रियान्वयन को केवल मुनाफे पर केंद्रित कर देने पर विनाशकारी साबित हो सकती हैं (दाएं)।

मगर, जब इन वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों का स्तर छोटा होता है और जब उनके वास्तविक प्रयोक्ता पूरी प्रक्रिया में सहभागी होते हैं तो पुनर्नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत सामाजिक रूप से न्यायसंगत और पर्यावरण की दृष्टि से विवेकशील फैसला साबित हो सकते हैं। ग्रीनपीस इंडिया ने सफलतापूर्वक यह दिखा दिया है (ऊपर) कि ४५० परिवारों और ५० व्यावसायिक इकाइयों की बस्ती भी एक सौर माइक्रोग्रिड के जरिए अपनी बिजली की जरूरतों को आसानी से पूरा कर सकती है।

जब 'वैकल्पिक' ऊर्जा भी एक मुसीबत बन जाती है। आंध्र प्रदेश स्थित कल्पावल्ली में बड़े पैमाने पर लगाई गई पवनचक्कियों ने भूमि प्रयोग और जल निकासी रुझानों को अस्त-व्यस्त कर डाला है जिससे यहां का वन्य जीवन और गांवों का अस्तित्व खतरा में पड़ने लगा है।

सौलर पैनलों और माइक्रो ग्रिड्स का इस्तेमाल करने वाले सामाजिक उद्यम सेल्को (बाएं) ने दक्षिण भारत के हजारों गरीब परिवारों को खुद अपनी सौर इकाइयों के सहारे बिजली हासिल करने में मदद दी है।

यहां इस बात को ज़हन में रखना जरूरी है कि ऊर्जा सुरक्षा के लिए अभिजात्य वर्ग के उपभोग में कमी लाना और ऊर्जा उत्पादन, वितरण व प्रयोग की कुशलता बढ़ाने के लिए संजीदा कोशिशें करना भी बहुत जरूरी है।

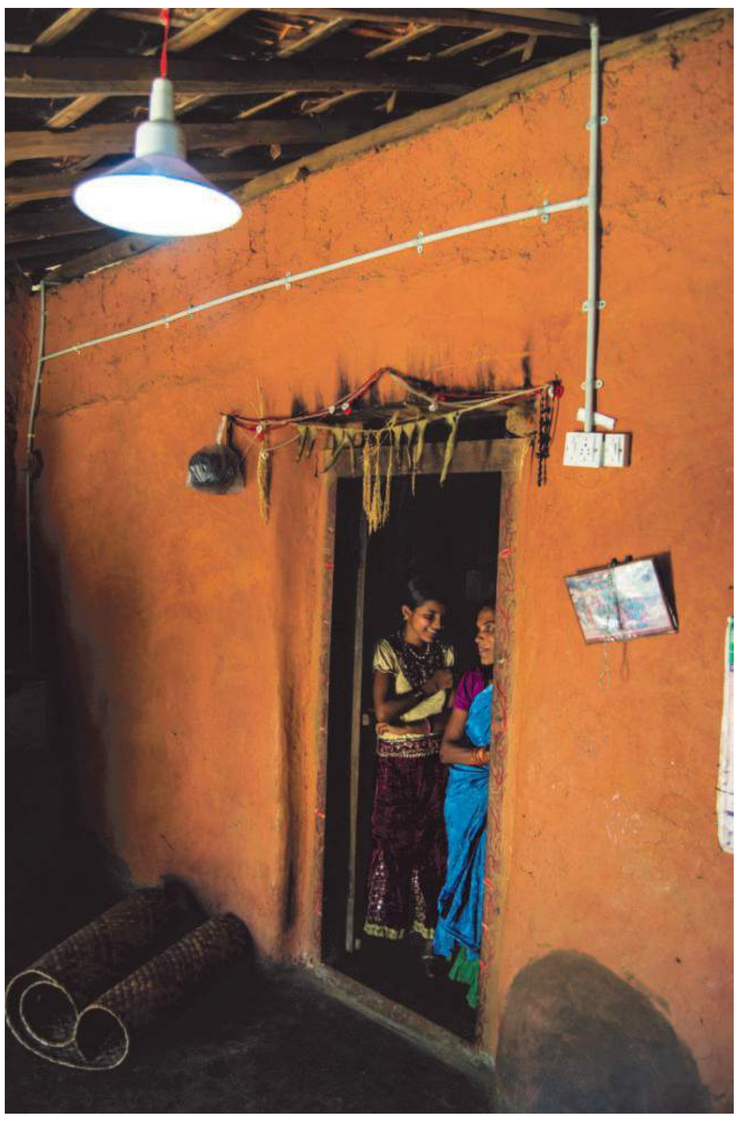

बाएं से दाएं और नीचेः *सेल्को द्वारा दक्षिण भारत के घरों, स्कूलों और छोटी व्यावसायिक इकाइयों में लगाए गए सौर ऊर्जा पैनल।*

संगमों के आहार

लदाख विकल्प संगम में लैदो गाँव की महिलाओं द्वारा बनाये गए स्थानीय व्यंजन

ऊपरः *लद्दाख के विकल्प संगम पर उपलब्ध "फक्त्सा मरक्कु" – आटे, सूखे पनीर, स्थानीय मक्खन और शक्कर से बनी मिठाई।*

हरेक विकल्प संगम (देखें पन्ना २०) मे मेजबानो ने अपने मेहमानों को स्थानीय भोजन खिलाया। इस तरह उन्होंने स्थानीय ज्ञान और संस्कृति को प्रोत्साहित किया। टिम्बकटू संगम में मेहमानों ने बाजरे, कोदो-कुटकी और अन्य देसी अनाजों से बने स्वादिष्ट भोजन और पेयों का मज़ा लिया। तमिलनाडु में अन्य भोजनों के साथ-साथ लोगों ने चुक्कूमल्ली (काफी, अदरक और धनिये) से बना पेय और गर्मागर्म पोंगल (उबले चावल से बने व्यंजन) का भी आनंद लिया। लद्दाख में लोगों ने वो अनूठे व्यंजन खाए जो राजधानी लेह के किसी होटल में भी नहीं मिलते, पर जो अभी भी गाँवों में खाए जाते हैं। इनमें टापू (कूटू के आटे और अखरोट का व्यंजन) और खंबीर (सम्पूर्ण गेहूं से बनी स्थानीय रोटी) भी शामिल थी। महाराष्ट्र में तरह-तरह के अनाजों और दालों से बने व्यंजन थे, जिनके साथ चटपटा ठेचा (मिर्ची की चटनी) भी थी। इस विविधता को भविष्य के संगमों में भी देखा जा सकेगा।

ऊपरः *वर्धा, महाराष्ट्र के विकल्प संगम पर मक्का, बाजरे, जोवार, उरद, मूंग आदि से बनीं अनेकों प्रकार की भाखरी और उनके के साथ अलसी, मिर्ची, टमाटर और दही से बनी तरह-तरह की चटनियां।*

संगम

चाहे टिकाऊ आजीविका और सहभागी अभिशासन का हो, खेती और जंगलों को बचाने का हो, चाहे शिक्षा और शहरी इलाकों के रूपांतरण का हो या महिलाओं, दलितों व समाज के अन्य उत्पीड़ित तबकों के सशक्तिकरण का हो, कोई भी जमीनी प्रयास या आंदोलन विचारों, संस्कृतियों और विश्व दृष्टिकोणों की एक बहुरंगी विरासत अपने भीतर समेटे चलता है। क्या सतही तौर पर अलग-थलग दिखाई देने वाले इन नजरियों और सोचों को एक ऐसी समग्र रूपरेखा में पिरोया जा सकता है जो आज की प्रभुत्वशाली आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था का आमूल विकल्प प्रस्तुत कर सके? क्या हम मिल-जुल कर एक वैकल्पिक भविष्य की दृष्टि रच सकते हैं?

इसके लिए ऐसे लोगों, समूहों और आंदोलनों का एक साझा मंच तैयार करना होगा जो अभिनव विकल्पों के लिए प्रयास कर रहे हैं ताकि क्षेत्रीय और राष्ट्रीय सभाओं और गोष्ठियों के माध्यम से यथास्थिति को सकारात्मक चुनौती दे सकें, एक दूसरे से सीख-बूझ सकें, साझेदारियां बना सकें और वैकल्पिक विश्व दृष्टिकोण पेश कर सकें। आदान-प्रदान के इन अवसरों को हमने विकल्प संगम का नाम दिया है।

पहले कुछ संगमों का आयोजन इस प्रकार हुआ है: आंध्र प्रदेश (अक्टूबर २०१४), तमिल नाडु (फरवरी २०१५), लदाख (जुलाई २०१५) और महाराष्ट्र (अक्टूबर २०१५). और जानकारी के लिए देखिये: *http://goo-gl/2n5BTe*

बाएं से दाएं: *टिम्बकटू कलेक्टिव (आंध्र प्रदेश), सेसी (तमिल नाडु), लेडेस्त्र (लदाख) और सेवाश्राम आश्रम (महाराष्ट्र) में आयोजित इन सम्मेलनों की तस्वीरें*

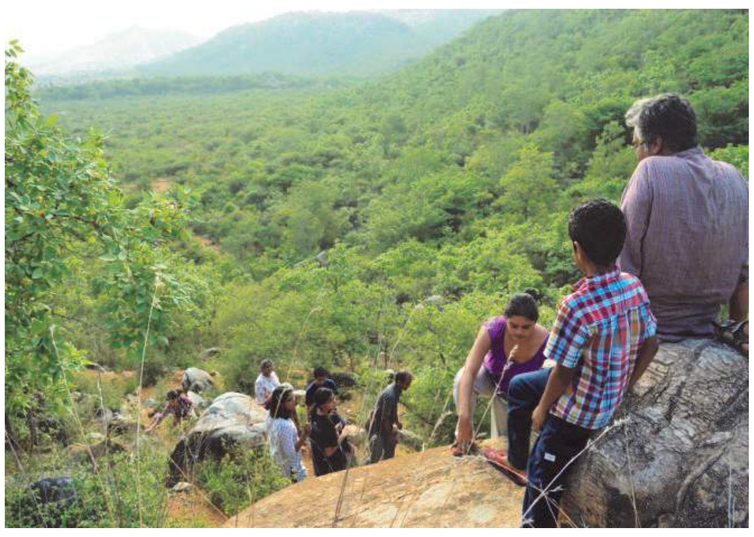

ये संस्त्रम स्त्रहरी चर्चा,, मजेदार स्त्रतिविधियों तथा कला, संस्त्रीत और नाट्य जैसे सांस्कृतिक कार्यकलाप के रोचक मिश्रण रहे हैं।

दुनिया तेजी से पर्यावरणीय या प्राकृतिक तबाही, व असमान्ताओं की और बढ़ रही है। इस स्थिति को लेकर हमारे सामने सबसे बड़ा सवाल है कि क्या ऐसी वैकल्पिक व्यवस्थायें और तरीकें हैं जिनकों अपना कर पृथवी को बिना नुकसान पहुंचाये और आधी मानवता को पीछे छोड़े बिना लोगों की जरूरतों और महत्वकांक्षाओं को पूरा किया जा सकता है?

इस प्रश्न का जवाब पुरे भारतभर में (जैसा कि विश्व के दूसरे भाग में है) स्थानीय गतिविधियाँ और नीतिगत प्रयासों से मिल रहा हैं। जिसमें विकेन्द्रीकृत शासन और संयुक्त उत्पादक.उपभोक्ता प्रयासों से लेकर पर्यावरण के संवेदनशील तरीको से मूलभूत आवशकताओं की पूर्ति को शामिल किया गया है। इसके अलावा शहरी . ग्रामीण क्षेत्रो के टिकाऊ विकास से लेकर सामाजिक और आर्थिक बराबरी के लिये चल रहे संघर्ष भी शामिल है। एक चलते.फिरते पोस्टर प्रदर्शन पर आधारित यह किताब, ऐसी कहानियों के बारे में

ISBN 9788187945680